श्रीमते रामानुजाय नमः

उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण

रचयिता
श्री स्वामी पराङ्कुशाचार्य
सरौती
पो अरवल(गया)

प्रथम संस्करण - 1000   सम्वत् - 2018

प्रकाशक ...... मुद्रक ......
श्रीभूनेश्वर प्रसाद सिंह
ग्राम - पो - नगवाँ
नौवतपुर(पटना)

त्रिमूर्ति प्रेस
खजांची रोड
पटना - 4

श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रुतेनतपसावा किं वचोभिश्चित्तवृत्तिभि ः।
बुद्धया वा किं निपुणवा बलेनेन्द्रिय राधसा।। भा स्क 4।31।11
किं वा योगेन सांख्येन न्यास स्वाध्याययोरपि।
किं वा श्रेयोभिरन्यैश्च न यत्रात्मप्रदो हरि ः ।। भा स्क 4।31।12
श्रेयसामपि सर्वेषामात्मा ह्यवधिरर्थत ः।
सर्वेषामपि भूतानां हरिरात्माऽऽत्मदः प्रियः।। भा स्क 4।31।13
नैष्कर्म्यमप्यच्युत भाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलंनिरञ्जनम् ।
कुतः पुनः शश्वद भद्रमीश्वरे न चार्पितं कर्म यदप्यकारणम्।। भा स्क 1।5।12

शास्त्र ज्ञान से, तप से, वचन की चतुराई से, चित्त की शुद्धवृत्ति से, बुद्धि से, बल से, इन्द्रियों की पटुता से, शरीर आत्मा के विवेक से, संन्यास और वेदाध्ययन से, व्रत वैराग्य आदि अन्य कल्याण साधनों से भी पुरूष को क्या लाभ ? अर्थात् कुछ भी नहीं। वास्तव में समस्त कल्याणों की अवधि भगवान की प्राप्ति है। भगवान की भक्ति विना निर्मल ज्ञान की भी शोभा नहीं है। किन्तु भगवान की कृपा विना भक्ति नहीं मिलती है। यथा-

जन्मान्तर सहस्रेषु बुद्धिया भाविता नृणाम् ।
तामेव लभते जन्तुरूपदेशो निरर्थकः।।1।।
प्रकाशयतुमात्मानं भक्तानां हितकाम्यया।
अवतीर्णो जगन्नाथ शास्त्ररूपेणवै प्रभुः।।2।।
तस्माच्छास्त्रे दृढंकार्या भात्ये मोक्ष परायणैः।
अभक्तस्य परे शास्त्रे भगवान्न प्रकाशते।।3।।

अनेक जन्मों के संस्कार से मनुष्यों को बुद्धि जिस ओर जाती है वे वैसे ही भाव को प्राप्त करते हैं। कुसंस्कार के कारण उनके प्रति किये गये सदुपदेश भी व्यर्थ हो जाते हैं। भक्तों की हित कामना के लिये तथा भक्तों के स्वरूपज्ञान के लिये शास्त्ररूप से भगवान अवतार लिये हैं। अर्थात् भगवान की कृपा ही से सद्शास्त्रों में पूर्ण विश्वास होता है। इससे मुमुक्षुओं को भगवान शास्त्र में दृढ़ विश्वास कराते हैं। पर अभक्तों के हृदय में शास्त्र का विश्वास नहीं होता है।

ये ही सर आवत अतिकठिनाई । राम कृपा बिनु आइ न जाई ।। मानस बा का 37।3

उन सद्शास्त्रों में उर्ध्वपुण्ड्र तिलक का विधान है।

धृतोर्ध्वपुण्ड्रः परमशितारम् नारायणं सांख्ययोगाधिगम्यम्।
ज्ञात्वा विमुच्यते नरः समस्तैः संसार पाशैरिह चैव विष्णुः।। महोपनिषत्

मनुष्य उर्ध्वपुण्ड्र धारण कर सांख्यादि शास्त्र द्वारा जानने योग्य तथा सर्वजीवों को अपने अधिकार में रखनेवाले नारायण को जानकर संसार बन्धन से छूट जाता है।

अर्चनाङ्गं बवीत्यन्या उर्ध्वपुण्ड्रं तथा श्रुतिः । नारद संहिता

उर्ध्वपुण्ड्र भगवत अर्चना का अंग है। श्रुति कहती है।

अर्चनादौ यज्ञमूर्तेरूर्ध्वपुण्ड्रमित्यारभ्य ।। भल्ल शाखा

उर्ध्वपुण्ड्र धारण कर यज्ञमूर्ति भगवान की अर्चना करे।

हरे ः पादाकृतिमात्मनो हिताय मध्येच्छिद्रमूर्ध्वपुण्ड्रं यो धारयते।
स परस्य प्रियो भवति, स पुण्यवान् भवति, स मुक्तिमान् भवति। महोपनिषत्

जो मनुष्य आत्मकल्याण के लिये भगवान के चरणाकार मध्य में अवकाशयुक्त श्रीचूर्ण उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण करते हैं वे परमात्मा के प्रिय भक्तिमान और मुक्तिमान होते हैं।

होम पूजादि समये सायं प्रातः समाहित ः।
उर्ध्वपुण्ड्रधरो विप्रो भवेच्छुद्धोन चान्यथा ।। बोधायन

ब्राह्मण प्रथम उर्ध्वपुण्ड्र करके सावधान हो सुवह शाम संध्यावन्दन होम पूजादि करने से शुद्ध होता है। अन्यथा नहीं।

ममार्चने विशेषेण उर्ध्वपुण्ड्रधरो द्विजः।
कुलं तारयते सप्त स गच्छेत्समतां मम।। ब्रह्मरात्रे

जो ब्राह्मण उर्ध्वपुण्ड्र धारण कर हमारी पूजा करते हैं वे सात कुल को तारकर हमारी समता को प्राप्त करते हैं।

पिशाच भूतवैताला कुष्माण्डाद्या महागणाः।
अस्यान्तिके न तिष्ठन्ति वैष्णवस्य महात्मनः।। ब्रह्माण्डे

उर्ध्वपुण्ड्रधारी श्रीवैष्णव के समीप भूत पिशाच वैताल और कुष्माण्ड नहीं आते। अर्थात् उन्हें इनका भय नहीं होता है।

उपवीतं शिखाबन्धमूर्ध्वपुण्ड्र विना कृतम् ।
अपवित्रकरं कर्म विप्रस्य विफल भवेत ।। विष्णु स्मृति

जनेउ शिखा उर्ध्वपुण्ड्र तिलक के विना ब्राह्मण के सब शुभकर्म निष्फल हो जाते हैं।

स्नात्वा ललाट तिलकं मृदा कुर्यादतन्द्रितः।
पाषण्ड पतितादीना दर्शनस्यापनुतये।। दक्ष स्मृति

स्नान कर सफेद मिट्टी का तिलक लगावे । तिलक धारण करने से पाषण्ड और पतितों के देखने का दोष नहीं लगता है।

स्वाध्याये भोजने चैव होम मंगल कर्मणि।
उर्ध्वपुण्ड्रधरो नित्यं राक्षसाञ्चापनुतये ।। भार्गव संहिता

वेदाध्ययन भोजन होम और मांगलिक कर्म उर्ध्वपुण्ड्र धारण कर नित्य करे।

यज्ञो दानं तपो होमो भोजनं पितृतर्पणम्।
सर्वे भवन्ति विफला उर्ध्वपुण्ड्रं विना कृतम्।। भार्गव संहिता

यज्ञ दान तप हवन भोजन और पितृतर्पण सब कर्म तिलक धारण किये विना निष्फल हो जाते हैं।

रक्षार्थमघनाशार्थं मंगलार्थं च भामिनि।
धारयेदूर्ध्वपुण्ड्रन्तु शिरसाहर्निशं सदा।। वामन पुराण

स्वरक्षार्थ पापनाशार्थ तथा मंगलार्थ सदा दिनरात सिर पर तिलक धारण करें।

मदाराधन काले च सदा यज्ञादि कर्मणि ।
अवश्यं धारयेदेतदूर्ध्वपुण्ड्रं द्विजोत्तमः।। ब्रह्माण्ड

भगवान कहते हैं कि ब्राह्मण हमारी पूजा तथा यज्ञादि कर्म में तिलक अवश्य धारण करें।

यज्ञ दान तपो होम जप स्वाध्यायकर्मसु ।
तत्फलं प्राप्तयेवश्यं धारयेदूर्ध्वपुण्ड्रकम् ।। ब्रह्माण्ड

यज्ञ दान तप होम जप स्वाध्याय कर्मों की फल प्राप्ति के लिये उर्ध्वपुण्ड्र तिलक अवश्य धारण करे।

श्रौत स्मार्त किया सर्वा उर्ध्वपुण्ड्रमकुर्वताम्।
जायन्ते निष्फला ब्रह्मन् बाधिताश्चभवन्ति ता ः ।। ब्रह्माण्ड

सभी श्रौत स्मार्त तथा कर्म तिलक धारण किये विना निष्फल हो जाते हैं। और वे सभी कर्म बाधित होते हैं।अतएव तिलक अवश्य धारण करे।

उर्ध्वपुण्ड्रधरो विप्रो मृतो वा यत्र कुत्रचित्।
श्वपचोपि विमानस्थो ममलोके महीयते।। ब्रह्माण्ड

ब्राह्मण या चाण्डाल ही क्यों न हो, यदि तिलक धारण किये जहाँ कही भी मर जाय तो अन्त में भगवान के समीप जाता है।

ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोऽथवा यति ः।
अवश्यं धारयेत्पुण्यमूर्ध्वपुण्ड्रं सुशोभनम्।। ब्रह्माण्ड

ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासी, ये सभी सुन्दर उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण करे।

उर्ध्वपुण्ड्राङ्कितो मर्त्यो यत्कुर्यात्कर्म वैदिकम्।
तत्सर्वं सफलं तस्य भवत्येव संशयः ।। नारद पुराण

जो उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण कर वैदिक कर्म करता है उसके सम्पूर्ण कर्म सफल हो जाते हैं। इसमें संशय नहीं।

उर्ध्वपुण्ड्र मृदा शुक्लं यो धत्ते नित्यमात्मवान्।
तस्य प्रसादं कुरूते विष्णुर्लोक नमस्कृतः ।। नारद संहिता

जो महात्मा सदा सफेद मिट्टी का उर्ध्वपुण्ड्र तिलक धारण करते हैं उनपर भगवान विष्णु कृपा करते हैं।

प्रशस्ते पर्वताग्रादौ जातया श्वेतमत्स्नया।
उच्चार्य केशवादीनि नामान्यङ्गे यथा कमम्।। पाद्मसंहिता

पर्वत में होने वाली श्वेत मृत्तिका उत्तम होती है। केशवादि द्वादश नामों का उच्चारण करते हुये तिलक धारण करे।

गिरौ नदीतटे वाथ वल्मीके जलधेस्तटे।
श्रीमत्तुलसिकामूले विष्णु क्षेत्रे यदि द्विजः।
सर्वतः सन्ति सरितो वल्मीका सन्ति भूतले।
पर्वताः सन्तिवहवो समुद्रा सर्वतो वृताः।। परमेष्टि संहिता

पर्वत नदीतट वामी समुद्रतट तुलसी तथा विष्णुक्षेत्र की मिट्टी से तिलक लगाना चाहिये।

सिन्धु तीरेऽथ वल्मीके विल्वमूले जलाशये।
पर्वताग्रे नदीतीरे मम क्षेत्रे विशेषतः ।
अन्यष्वपि च तीर्थेषु नलिनी मूलकेषुच।
स्थानेष्वेतेषु गृह्णीयात् कुर्यान्नान्यत्र मानवः।। ब्रह्माण्ड

समुद्रतट, वामी, बेल की जड़ , तालाब, पर्वत, नदीतट तथा दिव्यदेश, अन्यतीर्थ, कमलमूल, इन सब जगहों की मिट्टी तिलक के लिये लेनी चाहिये।

श्वेतप्रधानतो ग्राह्या उर्ध्वपुण्ड्रस्य धारणे।
सा च स्थानविशेषेण विशेष फलदा भवेत्।। नारद संहिता

उर्ध्वपुण्ड्र के लिये श्वेत मिट्टी प्रधान है। वे भी विशेष स्थान से विशेष फल देनेवाली है।यथा रङ्गपुरी, यादवाद्रि ।

उर्ध्वपुण्ड्रं द्विजकुर्याद् दण्डाकारं सुशोभनम्।
मध्येच्छिद्रं विजानीयात् वैष्णवानां विशेषतः ।।

ब्राह्ण उर्ध्वपुण्ड्र तिलक दण्ड के समान ऊपर की ओर खड़ा करे तथा बीच में श्रीचूर्ण लगाने के लिये जगह रखे।

दीपाकारं तत्श्चापि वेणुपत्रसमाकृतिः।
पद्मस्य मुकुलाकारं कुमुदस्योत्पलस्यवा।। ब्रह्मरात्र संहिता

तिलक के बीच में श्रीचूर्ण दीपशिखा वंशपत्र विना खिले कमलपुष्प तथा विने खिले भेटपुष्प के समान लगावे।अर्थात् नीचे चौड़ा तथा ऊपर पतला दीपशिखा के समान श्रीचूर्ण धारण करे।

धारयेच्छिद्र मध्येतु हरिद्रा चूर्णमृतमम्। अर्थात् श्रीचूर्ण हरदी का हो न कि लाल रंग आदि।

नासिकामूलमारभ्य आकेशान्तं प्रकल्पयेत्।

नासिका त्रितयं भागं नासिका मूलमिष्यते।।

भौं के बीच से नाक के तिहाई भाग तक वेलीपुष्प के एक दल के समान तिलक का सिंहासन पहले करे। बाद में आसन के ऊपर भाग में भगवान के युगल चरण के समान दण्डाकार केश के समीप तक श्वेत तिलक लगावे और बीच में दीपशिखा के समान श्रीचूर्ण धारण करे।

हरदी धारण का महत्व

हरिद्राति पर प्रेम्णा निजार्थोऽत्र विचार्यताम्।
प्रापणाच्चहरेः साक्षाद्धरिद्रैयं प्रकीर्तिता। 84
लक्ष्म्याः प्रेमतरू साक्षाद्धरेरत्यन्त वल्लभः।
संवीक्ष्य चिह्नितं तेन भक्तं प्रीणाति केशवः।। 85
लक्ष्मीप्रेमात्मकं द्रव्यं साक्षात्किंन करोतिच।
धनधान्यं समृद्धिं च रूपसौभाग्य संपदम्।।86।। ब्रह्म संहिता

समुद्र मंथन काल में जब लक्ष्मी भगवान को प्राप्त करना चाही उस समय उनकी आंखों से प्रेमाश्रु पतन होकर हरिद्रा रूप में हो गयी। वह हरिद्रा भगवान को अत्यन्त प्यारी हुई। वही हरदी का चूर्ण भक्तों के शिर पर लगे देखकर भगवान प्रसन्न होते हैं। वह लक्ष्मी की प्रेमरूपा हरदी साक्षात क्या क्या नहीं कर सकती। अर्थात् धन धान्य सब प्रकार की समृद्धियां सौभाग्य तथा संतति देती है। लक्ष्मी के चिह्न को धारण करने वाला पुरूष भगवान के प्रेमपात्र बन जाता है। यह ब्रह्मसंहिता में भगवान का वचन है।

लक्ष्मीरूपमिदं द्रव्यं पुण्ड्रमध्ये विभर्तियः।
दास्यं स लभते विष्णोः सत्यंसत्यंब्रवीम्यहम्।। ब्रह्म संहिता

लक्ष्मीरूप श्रीचूर्ण को जो उर्ध्वपुण्ड्र के बीच धारण करता है वह विष्णु का भक्त हो जाता है। यह ध्रुवसत्य है। तिलक में दोनों श्वेत रेखायें भगवान विष्णु के प्रतीक हैं तथा बीच की पीत रेखा लक्ष्मी का प्रतीक है। यथाः **पुण्ड्ररूपेण मां विद्धि रेषा रूपेण वै श्रियम्** । ब्रह्म संहिता ।

विवाह व्रतबन्धादि जन्मयात्रा सुयुज्यते।
द्रव्यं मांगलिकं साक्षाद्धरिद्रं प्रेम भाजनम्।। ब्रह्म संहिता।

हरदी विवाह उपनयन जन्मकाल में दर्शनी तथा यात्रा में मांगलिक है।

इससे सर्वत्र मांगलिक कार्यो में हरिद्रावन्दन हरदि मातृका वरकन्या के शरीर पर चढ़ाया अथवा लगाया जाता है। भगवान के पीताम्बर वस्त्रादि भी इसी का सूचक है। यथा ः

पीत झीन झिगुली पहिराये। मानस बाल 198।6
कटि तूणीर पीत पट बान्धे । मानस बाल 243।1
पीत यज्ञ उपवीत सुभाये। मानस बाल 243।1
पीत उपरना कांखा सोती । मानसबाल 326।4

श्रीनिवास भगवान के युगल चरणाकृति उर्ध्वपुण्ड्र तिलक सर्व आत्माओं के भगवच्चरणही शरण हैं अर्थात् सर्वविध रक्षक, उपाय, उपेय हैं, इसका सूचक है।
अवतार लेकर लोकसंग्रह के लिये भगवान राम एवं कृष्ण भी तिलक लगाते थे। यथा ः **"भाले दधानं शीत उर्ध्वपुण्ड्रं मध्येश्रियं पीत विराजमानम्।""भाल विशाल तिलक झलकाही।"** मानस बाल 242।3

भगवान अर्चामूर्ति में तिलक लगाये रहते हैं। आज भी रामलीला में राम मूर्ति को तिलक लगाया जाता है। परम भागवत प्रह्लाद नारद आदि भी पूर्व में तिलक धारण किये रहते थे।यथा ः
प्रह्लाद नारद पराशर पुण्डरीक। व्यासाम्बरीष शुक शौनक भीष्मदाल्भ्यान् रूक्मांगदार्जुन वशिष्ठ विभीषणादि पुण्यानिमान् परम भागवतंस्मरामि।।
प्रह्लाद नारद पराशर पुण्डरीक व्यास अम्बरीष शुकदेव सनक सनन्दन सनातन सनत्कुमार भीष्मपितामह शौनक दालभ्य रूक्मांगद अर्जुन वशिष्ट विभीषण ये सब परमभागवत उर्ध्वपुण्ड्रधारी थे।

अहो अमीषां किमकारि शोभनं
प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः ।
यैर्जन्म लब्धंनृषु भारताजिरे
मुकुन्द सेवौपयिकं स्पृहाहि नः। भागवत 5।19।21
देवता कहते हैं कि अहो जिन जीवों ने भारतवर्ष में भगवान की सेवा के योग्य मनुष्य जन्म प्राप्त किया है उन्होंने ऐसा क्या पुण्य किया है ? अथवा इनपर क्या स्वयं हरि ही प्रसन्न हो गये हैं ? इस परम सौभाग्य के लिये तो हम निरन्तर तरसते रहते हैं।
किं दुस्करैर्न ः कतुभिस्तपोव्रतै
दानादिभिर्वाद्यु जयेन फल्गुना ।
न यत्र नारायणपाद पंकज
स्मृतिः प्रमुष्टातिशयेन्द्रियोत्सवात् । भागवत 5।19।22
देवता कहते हैं कि हमें बड़े कठोर यज्ञ तप व्रत और दानादि करके जो यह तुच्छ स्वर्ग का अधिकार प्राप्त हुआ है इससे क्या लाभ है ? यहाँ तो इन्द्रियों के भोगों की अधिकता के कारण स्मृति शक्ति नष्ट हो जाती है। अतः कभी भी श्रीमन्नारायण के चरण कमलों की स्मृति होती ही नहीं है।
न यत्र वैकुण्ठकथा सुधापगा
न साधवो भागवतस्तदाश्रयाः।
न यत्र यज्ञेशमखा महोत्सवाः
सुरेशलोकोऽपि न वै स सेव्यताम्।। भागवत 5।19।24
जहाँ भगवत कथा की अमृतमयी सरिता नहीं बहती, जहाँ भगवद्भक्त साधुजन निवास नहीं करते और जहाँ नृत्य गीतादि के साथ भगवान की पूजा नहीं की जाती, वह चाहे ब्रह्मलोक ही क्यों न हो, उस स्थान का सेवन नहीं करना चाहिये।

चतुस्त्रिद्वयङ्गुलं वापि विस्तारं परिकल्पयेत्।

ललाटे केशवायेति चतुरङ्गुलमायतम्।। पराशरपरमधर्म शास्त्र

उर्ध्वपुण्ड्र की चौड़ाई चार तीन अथवा दो अंगुल की होनी चाहिये। ललाट के भौं से केश के समीप तक तिलक की लम्बाई होनी चाहिये।

नाभि प्रदेश में दश, हृदय प्रदेश में आठ, कण्ठ में चार, दहिनी कोख में दश, वायीं भुजा के बीच आठ, बायें कन्धे पर चार, पीठ पर चार एवं पीठ के उपरी भाग में चार अंगुल लम्बा तिलक केशवादि द्वादश नामों से धारण करे।

उर्ध्व शब्द का अर्थ परमात्मा तथा परमात्मा का परमधाम वैकुण्ठ है। यथा **"उर्ध्व गच्छन्ति सत्वस्था"** गीता **14।18**। अर्थात् महात्मा परमधाम वैकुण्ठ को पाते हैं।पुण्ड्र शब्द का अर्थ तिलक है। इसका आशय है कि उर्ध्वपुण्ड्र तिलकधारी अंत में परमधाम वैकुण्ठ पाते हैं।